बाल कहानियाँ

# बूढ़ा मसीहा

ओमप्रकाश कश्यप

# बूढ़ा मसीहा

*(ओमप्रकाश कश्यप की बाल कहानियां)*

## ओमप्रकाश कश्यप

# अनुक्रम


| | |
|---|---|
| विविध की डायरी | 3 |
| नीलतारा | 17 |
| बूढ़ा मसीहा | 27 |
| चोरों की बस्ती | 55 |
| साझे की ख़ुशी | 59 |
| चिड़िया और किसान | 62 |
| ताश का इक्का | 66 |
| एक और लोककथा | 71 |
| इकन्नी | 75 |
| आधी-अधूरी यात्रा | 78 |
| नानी की कहानी | 82 |

## विविध की डायरी

विविध के दादू को डायरी लिखने का शौक है. बोर्डिंग में जाने पर विविध को घर की याद आई तो उसने भी कलम उठा ली. ये पन्ने उसी की डायरी के हैं, जो उसने अपने दादू को संबोधित करते हुए लिखे हैं-

17 फरवरी 2015

आज बोर्डिंग का तीसरा दिन है. मैं दो दिनों तक लगातार सोचता रहा कि घर में कोई मुझे प्यार नहीं करता. बहुत शरारती हूं न! इसलिए मुझे घर से दूर कर दिया गया है. बीते दो दिन मैं लगातार अच्छा बालक बनने की कोशिश करता रहा. इन दो दिनों में मैंने कोई शरारत नहीं की. मुंह तक नहीं खोला. मुझे गुमसुम देख बच्चों ने मान लिया कि मैं बीमार हूं. वे मेरा हाल-चाल पूछने आए. जब उन्हें पता चला कि मुझे कुछ नहीं हुआ है, तो दब्बू कहकर मेरी हंसी उड़ाने लगे. मुझे उदास देखकर मैडम ने पूछा था-

'घर की याद आ रही है विविध?' मैं चुपचाप किताब में आंखें गढ़ाए रहा.

'ऐसा सबके साथ होता है. धीरे-धीरे नए दोस्त बनते हैं. आदमी छूटे हुए को भूल जाता है.' मैडम कहे जा रही थीं. वही गोल-मोल बातें. जैसी बड़े अकसर बच्चों के साथ करते हैं. मैं दादू के अलावा किसी और के साथ सहज हो ही नहीं पाता. मुझे आज भी याद है, जब मैं हॉस्टल के लिए निकला था, तब दादू ने कहा था-'दुनिया से जुड़ने के लिए खुद से जुड़ना बहुत जरूरी है.'

जब से आया हूं, यह बात मेरे दिमाग में लगातार चक्कर काट रही है.

‘मैडम, खुद से जुड़ना क्या होता है?’ मैंने पहली बार अपना मुंह खोला. मैडम चकित होकर मेरी ओर देखने लगीं. शायद ऐसे सवाल की उन्हें उम्मीद ही नहीं थी. कुछ देर बाद मेरे कंधों पर हाथ रख मुझे समझाते हुए बोलीं-

‘अपनी शक्तियों को समेटे रखना.’ फिर पहेली! मैं मैडम की ओर देखने लगा. बड़े लोगों को पहेली बूझने के लिए हम बच्चे ही क्यों मिलते हैं! दादू की पहेली क्या कम उलझन-भरी थी जो मैडम ने एक पहेली और दाग दी. मैंने देखा, मैडम मुस्करा रही थीं-

‘तुम समझदार हो. पर कुछ चीजें वक्त के साथ धीरे-धीरे समझ में आती हैं.’

खाक समझ में आती हैं. दादू के पास आने-जानेवालों का तांता लगा रहता है. उनमें कुछ विद्यार्थी भी होते हैं. दादू अपने पास आनेवाले वालों से अकसर कहा करते हैं- ‘शब्दों से दोस्ती करो.’

उन लड़कों के पल्ले क्या पड़ता है, मुझे नहीं पता. परंतु शब्दों से दोस्ती की बात मैं समझ सकता हूं. दादू अस्सी बरस की अवस्था में रोज डायरी लिखते हैं. फुर्सत मिलते ही कुछ न कुछ पढ़ने लग जाते हैं. मेरे लिए यह पहेली अबूझ नहीं है. इसलिए घर छोड़ते समय मैंने सबसे पहला फैसला किया था- शब्दों से दोस्ती करने का.

माफी चाहता हूं दादू. आपकी अलमारी से नीली डायरी निकालकर मैंने अपने बैग में रख ली थी. सोचा दादू की तरह रोज कुछ न कुछ लिखूंगा. लेकिन पिछले दो दिन मन बेहद उदास रहा. शब्द जंगली हिरन की तरह पकड़ से दूर भागते रहे. आज मैंने ठान लिया था कि कुछ न कुछ लिखकर मानूंगा. कलम उठाई तो शब्द अपने आप उतरने लगे. तब पता चला कि शब्द दोस्ती के लिए हमसे भी ज्यादा उतावले होते हैं. मन से पुकारो तो कतार बांधे खुद-ब-खुद चले आते हैं. दादू ठीक कहते हैं-हर मंजा हुआ लेखक कमांडर की तरह होता है, शब्द उसके अनुशासित सेनानी.